Dr. Vandana Suman
Professor
Deptt. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara
UG - Sem - IV - MJC - 07
Basic Concepts of Philosophy

"Brahma: Saguna and Nirguna"
(ब्रह्म: निर्गुण और सगुण)

वेदान्त ने सांख्य के प्रकृति-पुरुष रूपी द्वैतभाव को मिटाकर, इनका समावेश एक ही परम तत्व "ब्रह्म" में किया। वेदान्त के अनुसार ब्रह्म, जगत् का निमित्त भी है और उपादान भी। इसी एकीभाव के कारण ही वेदान्त को 'अद्वैतवादी' दर्शन कहा जाता है।

'अद्वैतवाद' के अनुसार यह सारा विश्व-प्रपंच एक ही अद्वितीय तत्व में अन्तर्भूत, स्थित और प्रकाशित है। इस अद्वितीय तत्व ब्रह्म के अतिरिक्त इस संसार में किसी की सत्ता नहीं है। वही सारे दृश्यमान जगत् को प्रकाशित करने वाला स्वयंप्रकाश, अनन्त, अखण्ड, अनादि, अविनाशी, चेतनस्वरूप और आनन्दमय है। अनेक उपाधियों में विवर्तित होकर अनेक प्रकार के जड़ (माया, अविद्या) तथा चेतन (जीव) पदार्थों में वही दिखायी देता है। वह अनुमान से सिद्ध नहीं होता, बल्कि शब्दप्रमाण द्वारा ही इसको जाना जा सकता है। इसके अस्तित्व को सिद्ध करने की भी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि आत्मा के अस्तित्व से ही 'ब्रह्म' का अस्तित्व स्वतः सिद्ध है। इसके अस्तित्व के प्रमाण

श्रुतियाँ हैं।

यह संसार असत्य, जड़ और दुःखात्मक है, जब कि ब्रह्म सत्, चित् और आनन्द स्वरूप है। वह 'सत्' है अर्थात् अपने निश्चित रूप से कभी भी व्यभिचारित नहीं होता। वह 'चित्' है अर्थात् ज्ञान स्वरूप चैतन्य होने के कारण वह सदा 'प्रबुद्ध' है। पूर्णकाम होने के कारण वह आनन्दमय है। इस सृष्टि के पहले भी वही था, इस सृष्टि की सत्ता में भी वह है और इस सृष्टि की लयावस्था में भी वह रहेगा। जैसे मिट्टी से बने बर्तन मिट्टी के विकार मात्र हैं उसी प्रकार यह संसार भी ब्रह्म का विवर्त है। इसको अवाङ्मनसगोचर कहा गया है। ज्ञाता, ज्ञेय और ज्ञान की त्रिपुटी से रहित वह अनन्त, अखण्ड चैतन्य स्वरूप है।

शंकराचार्य ने दो दृष्टियों से ब्रह्म का विचार किया जाना बताया है:

(1) व्यावहारिक दृष्टि से
(2) पारमार्थिक दृष्टि से

एक को शंकराचार्य ने ब्रह्म का तटस्थ लक्षण और दूसरे को स्वरूप लक्षण कहा है।

व्यावहारिक दृष्टि से यह जगत्

और इसके समस्त व्यापार सत्य मानकर ब्रह्म को इस जगत का कर्त्ता, पालक और संहारक कहा जा सकता है। इस व्यावहारिक दृष्टि से ब्रह्म को सगुण मानकर ईश्वर भक्ति का विकास हुआ। किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से भले ही हम जगत को सत्य और उसका कर्ता ईश्वर को मान लें, किन्तु उसका यह तटस्थ लक्षण उसका औपाधिक गुण है, वास्तविक स्वरूप नहीं है। रंगमंच पर राजा की भूमिका का अभिनय करनेवाला एक साधारण व्यक्ति नाटक की समाप्ति तक भले ही राजा समझ लिया जाता है; किन्तु बाद में वह अपनी वास्तविक अवस्था में एक साधारण व्यक्ति ही रहता है। जब वह एक अभिनेता के रूप में राजा, विजेता और शासक का पार्ट अदा करता है तो उसका यह 'तटस्थ लक्षण' कहलाता है, किन्तु जब वह अपनी प्रकृतावस्था में होता है तब उसका वह 'स्वरूप लक्षण' कहलाता है। 'तटस्थ लक्षण' वह है जो वास्तविक स्वरूप से भिन्न होता है।

इसलिए ब्रह्म का 'स्वरूप लक्षण' ही वास्तविक है, उसका 'तटस्थ लक्षण' केवल व्यावहारिक दृष्टि से सत्य है। सृष्टि-रचना के लिए ब्रह्म 'तटस्थ लक्षण' धारण करके निर्गुण से सगुण हो जाता

है। जगत्कर्त्ता जगत्पालक और जगत्संहारक आदि विशेषण इसके तटस्थ लक्षण हैं और व्यावहारिक दृष्टि से ही वे सत्य प्रतीत होते हैं। किन्तु जगत के सम्बन्ध को छोड़कर पारमार्थिक दृष्टि से जब ब्रह्म का विचार किया जाता है तभी इसका वास्तविक स्वरूप जाना जा सकता है। शंकराचार्य के मतानुसार वही परब्रह्म है।

जिस प्रकार रस्सी में साँप का भ्रम हो जाने से रस्सी में कोई विकार नहीं आता अथवा राजा का अभिनय करनेवाले नट को राज्य की प्राप्ति तथा पराजय का कोई हानि-लाभ नहीं होता इसी प्रकार इस जगत के सुख-दुःखादि व्यापारों का ब्रह्म पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

अद्वैत वेदान्त में पारमार्थिक दृष्टि को ही वास्तविक माना गया है किन्तु इस व्यापक लोक-जीवन का संचालन व्यावहारिक दृष्टि से संपन्न होता आ रहा है। इसलिए व्यावहारिक दृष्टि को भी वेदान्त में सर्वथा उपेक्षणीय नहीं समझा गया है। प्रतीत और वास्तविक रूप में वैभिन्य होते हुए भी इनके बिना ब्रह्म और जगत का सम्बन्ध नहीं समझा जा सकता है। इसलिए पारमार्थिक दृष्टि की ही भाँति

व्यावहारिक दृष्टि की प्रयोजनीयता भी
असंदिग्ध है।

वेदान्त के अनुसार यद्यपि ईश्वर को ब्रह्म के औपाधिक रूप में स्वीकार किया गया है, फिर भी इसका यह अर्थ नहीं है कि ब्रह्म से ईश्वर का दर्जा कुछ कम है। परब्रह्म जब बीजरूप अनादि शक्ति से युक्त होकर जगत की उत्पत्ति के लिए तटस्थ जब बीजरूप अनादि शक्ति से युक्त होकर जगत की, उत्पत्ति के लिए तटस्थ लक्षण धारण करता है तब वह सगुण ब्रह्म या ईश्वर कहलाता है। ब्रह्म के इन दो रूपों का वर्णन उपनिषदों में भी वर्णित है। उपनिषदों का परब्रह्म ही निर्गुण ब्रह्म और अपरब्रह्म ही सगुण ईश्वर है। निर्गुण ब्रह्म निरुपाधि, निर्विशेष और सगुण ब्रह्म सोपाधिक, सविशेष है।

'वेदान्तसार' में सदानन्द ने सगुण ईश्वर की विभूतियों के सम्बन्ध में कहा है कि 'यह ईश्वर स्थावर, जंगम आदि समस्त प्रपंचों का साक्षी होने के कारण और समस्त अज्ञानों को प्रकाशित करने के कारण 'सर्वज्ञ' है; सभी जीवों को उनके कर्मों के अनुसार फल देने के कारण 'सर्वेश्वर' है; सभी जीवों को उनके कर्मों में

है। वृत्त कर्मों के कारण 'सर्वनियन्ता' है, प्रमाणों के द्वारा वह नहीं जाना जा सकता है; अतः अप्रमेय है; सभी जीवों के हृदय में निवास कर उन्हें नियंत्रित करने के कारण 'अन्तर्यामी' है, और समस्त चराचर विश्व का विवर्त रूप में अधिष्ठान होने के कारण जगत् का कारण भी है।

ब्रह्म की भाँति ईश्वर भी भोक्ता नहीं, साक्षी है। किन्तु वह जगत् का कर्ता, पालक और संहारक, तीनों है। वह 'सक्रिय' है, क्योंकि माया से युक्त है, अतः वह उपासना का विषय है और उपासकों की भक्ति से प्रसन्न होकर वह नाना नाम रूपों में प्रकट होता है।

इस विचार से ब्रह्म और ईश्वर दोनों शब्दों का यद्यपि एक ही अर्थ प्रतीत होता है, तथापि

03 SUNDAY

ब्रह्म शब्द से जहाँ लक्ष्य और वाच्य, दोनों अर्थों का बोध होता है वहाँ ईश्वर शब्द से केवल वाच्य अर्थ का ही बोध होता है। इसलिए लक्ष्य अर्थ की दृष्टि से ब्रह्म शब्द का भिन्नार्थ में निरूपण किया गया है।

शंकराचार्य के मत में उपासना आध्यात्मिक उन्नति

का एक सोपान है। जो अविवेकी मनुष्य है वह इसी संसार को सब कुछ समझता है या इसी में लिप्त रहना चाहता है। जगत को ही सब कुछ समझने वाले विचारकों ने 'निरीश्वरवाद' का प्रतिपादन किया। इन निरीश्वरवादी नास्तिक विचारकों के प्रभाव से बचने के लिए शंकराचार्य ने देवताओं की उपासना को स्वीकार किया है। जब कि श्रद्धालु मनुष्य ईश्वर को जगत्पालक के रूप में पूजता है तो वह अविवेकी मनुष्य की अपेक्षा अपनी आध्यात्मिक उन्नति की दिशा में आगे बढ़ जाता है। इस उपासना-पद्धति ने ही 'ईश्वरवाद' की प्रतिष्ठा की। रामानुज वल्लभ आदि इसके अधिष्ठाता आचार्य हुए। भक्ति और उपासना में तल्लीन होकर जीव, जब अपने स्वरूप को समझ लेता है तब सगुण भक्ति और उपासना से विरत होकर वह निर्गुण ब्रह्म की ओर अग्रसर होता है। यही शंकराचार्य का 'अद्वैतवाद' और मुमुक्षु की अन्तिम मंजिल है।

अद्वैतरूप निर्गुण ब्रह्म के प्रधान आचार्य शंकर और सगुण सोपाधि ब्रह्म के प्रधान आचार्य वल्लभ तथा रामानुज हुए, जिन्होंने भक्ति मार्ग का प्रतिपादन किया।